ISSN : 2277-7865
Price : ₹ 50

# तित्थयर

वर्ष : ३९ अंक : ०३ जून २०१५

॥ जैन भवन ॥

*With Best Compliments From :*

# THE JUTE SHOP®

## www.thejuteshop.com

Promotional Bags

Fashion Bags



## Ballyfabs International Limited

5, Middleton Street, Kolkata - 700 071
p: +91 33 2287 2286, f: + 91 33 2289 2519
e: info@thejuteshop.com, w: www.thejuteshop.com

ECOCERT · SA 8000 CERTIFIED · ISO 9001 CERTIFIED · Sedex · FAIRTRADE · climatecare · ISO 14001:2004 · OHSAS 18001:2007 · Green America

BFIL0913

**Manufacturers of Hessian & Jute Good**

ISSN 2277 - 7865

# तित्थयर

*श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका*

वर्ष - ३९ अंक - ३ जून २०१५

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,
Email : jainbhawan@rediffmail.com
Website : www.jainbhawan.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00
Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 006 Phone : 2241-1006

**संपादन**
**डॉ. लता बोथरा**
पी-एच.डी., डी.लिट्

॥ जैन भवन ॥

**Editorial Board :**

1. Dr. Satyaranjan Banerjee
2. Dr. Sagarmal Jain
3. Dr. Lata Bothra
4. Dr. Jitendra B. Shah
5. Dr. Anupam Jash
6. Dr. Peter Flugel
7. Dr. Rajiv Dugar
8. Smt. Jasmine Dudhoria
9. Smt. Pushpa Boyd

# अनुक्रमणिका


| क्र. सं. | लेख | लेखक | पृ. सं. |
|---|---|---|---|
| १. | यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान | डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी | ७७ |
| २. | स्वभाव-दर्शन का दर्पण-अहिंसा | श्रीमती कल्पना मुकीम | ८४ |
| ३. | सोने के कंगन | श्री केवल मुनि | १०० |


**ISSN 2277 - 7865**

**कवरपृष्ठ :** जिन पार्श्वनाथ, खाम वाट, थाईलैण्ड

**Composed by:**
**Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007**

# यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान

डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी

यक्ष का नाम (धरणेन्द्र या धरणीधर) सम्भवतः शेषनाग (नागराज) से प्रभावित है। शीर्षभाग में सर्पछत्र एवं हाथ में सर्प का प्रदर्शन भी यही सम्भावना व्यक्त करता है। यक्ष के हाथ में वासुकि के प्रदर्शन का निर्देश है जो हिन्दु परम्परा के अनुसार सर्पराज और काश्यप का पुत्र है। यक्ष के साथ कूर्मवाहन का प्रदर्शन सम्भवतः कमठ (कूर्म) पर उसके प्रभुत्व का सूचक है, जो उसके स्वामी (पार्श्वनाथ) का शत्रु था।[1]

**दक्षिण भारतीय परम्परा**–दिगंबर ग्रन्थ में पांच सर्पफणों से आच्छादित चतुर्भुज यक्ष का वाहन कूर्म कहा गया है। यक्ष के ऊपरी हाथों में सर्प और निचले में अभय एवं कटक मुद्राओं का उल्लेख है। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में कूर्म पर आरुढ़ चतुर्भुज यक्ष के करों में कलश, पाश, अंकुश एवं मातुलिंग वर्णित है। यक्ष-यक्षी-लक्षण में कलश के स्थान पर पद्म (? उत्फुल्लधर) एवं शीर्षभाग में एक सर्पफण के छत्र के प्रदर्शन का उल्लेख है।[2]

**मूर्ति-परम्परा :** पार्श्व या धरण यक्ष के निरूपण में केवल सर्पफणों[3] एवं कभी कभी हाथ में सर्प के प्रदर्शन में ही ग्रन्थों के निर्देशों का पालन हुआ है। ल. नवीं शती ई. में यक्ष की मूर्तियों का उत्कीर्णन प्रारम्भ हुआ।

**(क) स्वतन्त्र मूर्तियां :** पार्श्व यक्ष की स्वतंत्र मूर्तियां (9वीं-13वीं शती ई.) केवल ओसिया (महावीर मन्दिर), ग्यारसपुर (मालादेवी मन्दिर) एवं लूणवसही से मिली हैं। लूणवसही की मूर्ति में यक्ष चतुर्भुज है और

1. भट्टाचार्य, वी. सी., पू.नि., पृ. 118
2. रामचन्द्रन, टी. एन., पू.नि., पृ. 210
3. शीर्षभाग के सर्पफणों की संख्या (1, 3, 5, 7) कभी स्थिर नहीं हो सकी।

अन्य उदाहरणों में द्विभुज है। ओसिया के महावीर मन्दिर (श्वेताम्बर, ल. 9वीं शती ई.) से पार्श्व की दो मूर्तियां मिली हैं। एक मूर्ति गूढ़मण्डप की पूर्वी भित्ति पर है जिसमें सात सर्पफणों के छत्र से युक्त यक्ष स्थानक मुद्रा में है और उसके सुरक्षित बायें हाथ में पुष्प है। दूसरी मूर्ति अर्धमण्डप के स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। इसमें त्रिसर्पफणों से शोभित एवं ललितमुद्रा में आसीन यक्ष के दाहिने हाथ का आयुध अस्पष्ट है, पर बायें में सम्भवतः सर्प है। ग्यारसपुर के मालादेवी मन्दिर (दिगंबर, 10वीं शती ई.) की मूर्ति[1] में पांच सर्पफणों के छत्र से युक्त धरण पद्मासन पर त्रिभंग में खड़ा है। उसका दाहिना हाथ अभयमुद्रा में है और बायें में कमण्डलु है। लूणवसही (श्वेताम्बर, 13वीं शती ई. का पूर्वार्ध) की मूर्ति गूढ़मण्डप के दक्षिणी प्रवेशद्वार पर है जिसमें तीन अवशिष्ट करों में वरदाक्ष, सर्प एवं सर्प प्रदर्शित हैं।

**(ख) जिन-संयुक्त मूर्तियां :** पार्श्वनाथ की मूर्तियों में यक्ष-यक्षी का अंकन ल. दसवीं-ग्यारहवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ। ज्ञातव्य है कि दिगंबर स्थलों पर पार्श्वनाथ की मूर्तियों में सिंहासन या पीठिका के छोरों पर यक्ष-यक्षी का चित्रण नियमित नहीं था।[2] गुजराद और राजस्थान की सातवीं से बारहवीं शती ई. की श्वेतांबर परम्परा की पार्श्वनाथ की मूर्तियों में यक्ष-यक्षी सर्वानुभूति एवं अम्बिका हैं। अकोटा, ओसिया (1019 ई.) एवं कुम्भारिया (पार्श्वनाथ मन्दिर, 12वीं शती ई.) की कुछ पार्श्वनाथ

---

1. यह मूर्ति मण्डप के उत्तरी जंघा पर है।
2. दिगंबर स्थलों की अधिकांश मूर्तियों में यक्ष-यक्षी के स्थान पर मूलनायक के पार्श्वों में सर्पफणों के छत्रों से युक्त दो स्त्री-पुरुष आकृतियां उत्कीर्ण हैं, जो धरण और पद्मावती हैं। यह उस समय का अंकन है जब कमठ के उपसर्ग से पार्श्वनाथ की रक्षा के लिए धरणेन्द्र पद्मावती के साथ देवलोक से पार्श्वनाथ के निकट आया था। ऐसी मूर्तियों में धरण सामान्यतः चामर (या घट) और पद्म (या फल) से युक्त है तथा पद्मावती के दोनों हाथों में एक लम्बा छत्र प्रदर्शित है जिसका ऊपरी भाग पार्श्व के मस्तक के ऊपर है। यह चित्रण परम्परासम्मत है। कुछ मूर्तियों (विशेषतः देवगढ़) में इन आकृतियों के साथ ही सिंहासन छोरों पर यक्ष-यक्षी भी निरूपित हैं।

की मूर्तियों में सर्वानुभूति एवं अम्बिका के सिरों पर सर्पफणों के छत्र भी प्रदर्शित है जो पार्श्वनाथ का प्रभाव है। विमलवसही की देवकुलिका 4 (1188 ई.) की अकेली मूर्ति में पार्श्वनाथ के साथ पारम्परिक यक्ष निरूपित है। कूर्म पर आरूढ़ एवं तीन सर्पफणों के छत्र से युक्त चतुर्भुज पार्श्व गजमुख है और करों में मोदक पात्र, सर्प, सर्प एवं धन का थैला[1] लिये है। एक हाथ में मोदकपात्र का प्रदर्शन और यक्ष का गजमुख होना गणेश का प्रभाव है।

उत्तरप्रदेश एवं मध्यप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों की पार्श्वनाथ की मूर्तियों में भी यक्ष-यक्षी अंकित हैं। देवगढ़ की तीस मूर्तियों में से केवल सात ही में (10वीं-11वीं शती ई.) यक्ष-यक्षी निरुपित हैं।[2] छह उदाहरणों में द्विभुज यक्ष-यक्षी सामान्य लक्षणों वाले हैं।[3] मन्दिर 9 की दसवीं सती ई. की एक मूर्ति में यक्ष-यक्षी तीन सर्पफणों के छत्र से युक्त हैं। मन्दिर 12 के समीप की एक अरक्षित मूर्ति (11वीं शती ई.) में एक सर्पफण के छत्र से युक्त यक्ष-यक्षी चतुर्भुज हैं। यक्ष के हाथों में अभयमुद्रा, सर्प, पाश एवं कलश हैं। इस मूर्ति के अतिरिक्त अन्य किसी उदाहरण में देवगढ़ में पार्श्व के साथ पारम्परिक यक्ष-यक्षी नहीं निरूपित हुए।

खजुराहों की केवल चार मूर्तियों (11वीं-12वीं शती ई.) में यक्ष-यक्षी आमूर्तित हैं।[4] स्थानीय संग्रहालय (के 100) की एक मूर्ति (11वीं शती ई.) में पाँच सर्पफणों से शोभित द्विभुज यक्ष फल (?) एवं फल से युक्त है। पुरातात्त्विक संग्रहालय, खजुराहो की एक मूर्ति (1618, 12वीं शती ई.) में सर्पफणों की छत्रावली से युक्त यक्ष नमस्कार मुद्रा में

1. यह नकुल भी हो सकता है।
2. अन्य उदाहरणों में सामान्यतः चामरधारी धरणेन्द्र एवं छत्र या चामरधारिणी आमूर्तित हैं।
3. पद्मावती इनके करों में अभयमुद्रा (या गदा) एवं कलश (या फल या धन का थैला) प्रदर्शित हैं।
4. अन्य उदाहरणों में धरण एवं पद्मावती की क्रमशः चामर एवं छत्र (या चामर) से युक्त आकृतियां उत्कीर्ण हैं।

निरुपित हैं। स्थानीय संग्रहालय (के 5) की एक मूर्ति (11वीं शती ई.) में चतुर्भुज यक्ष के दो अवशिष्ट करों में पद्म एवं फल हैं। स्थानीय संग्रहालय (के 68) की एक अन्य मूर्ति में पाँच सर्पफणों के छत्र वाले चतुर्भुज यक्ष के करों में अभयमुद्रा, शक्ति (?) सर्प एवं कलश प्रदर्शित हैं। खजुराहों में यद्यपि धरण का कोई निश्चित स्वरूप नहीं नियत हुआ, पर शीर्षभाग में सर्पफणों के छत्र का चित्रण अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा नियमित था। राज्य संग्रहालय, लखनऊ की पार्श्वनाथ की केवल चार ही मूर्तियों में यक्ष-यक्षी उत्कीर्णित हैं। नवीं-दसवीं शती ई. की तीन मूर्तियों में द्विभुज यक्ष की दाहिनी भुजा में फल और बायीं में धन का थैला हैं।[1] ग्यारहवीं शती ई. की चौथी मूर्ति (जे 794) में पाँच सर्पफणों वाले चतुर्भुज यक्ष के सुरक्षित दाहिने हाथों में फल एवं पद्म प्रदर्शित हैं।

**दक्षिण भारत**— उत्तर भारत के दिगंबर स्थलों के समान ही दक्षिण भारत में भी पार्श्वनाथ के सिंहासन के छोरों पर यक्ष-यक्षी की निरूपण लोकप्रिय नहीं था।[2] दक्षिण कन्नड़ क्षेत्र की एक पार्श्वनाथ मूर्ति (10वीं 11वीं शती ई.) में एक सर्पफण के छत्र से युक्त यक्ष चतुर्भुज है। यक्ष के तीन सुरक्षित करों में गदा, कलश और अभयमुद्रा हैं।[3] कन्नड़ शोध संस्थान संग्रहालय की मूर्ति में चतुर्भुज यक्ष के हाथों में पद्म, पाश, परशु एवं फल हैं।[4] प्रिंस ऑव वेल्स म्यूजियम, बम्बई में दो स्वतन्त्र चतुर्भुज मूर्तियां हैं।[5] एक उदाहरण में तीन सर्पफणों के छत्र से युक्त यक्ष

1. जी 310, जे 882, 40.121
2. बादामी एवं अयहोल की मूर्तियों में दोनों पार्श्वों में धरणेन्द्र और पद्मावती को क्रमशः नमस्कार-मुद्रा में (या अभयमुद्रा व्यक्त करते हुए) और छत्र धारण किये हुए दिलाया गया है। धरणेन्द्र सर्पफल के छत्र से रहित और पद्मावती उसके युक्त हैं।
3. हाडवे, डब्ल्यू. एस., नोट्स आन टू जैन मेटल इमेजेज, **रूपम**, अं. 17, पृ. 48-49
4. अन्निगेरी, ए. एम., **ए गाइड टू दि कन्नड़ रिसर्च इन्स्टिट्यूट म्यूजियम,** धारवाड़, 1958, पृ. 19
5. संकलिया, एच. डी. जैन यक्षज ऐण्ड यक्षिणीज, **बु.ड.का.रि. ई.,** खं. 1, अं. 2-4, पृ. 157-58; **जै.क.स्था.**, खं. 3, पृ. 583-84

कूर्म पर आरूढ़ है और उसके करों में वरदमुद्रा, सर्प, सर्प एवं नागपाश प्रदर्शित हैं। तीन सर्पफणों के छत्र से युक्त दूसरी मूर्ति (12वीं शती ई.) में यक्ष के हाथों में सनाल पद्म, गदा, पाश एवं वरदमुद्रा है।[1] यक्ष ललितमुद्रा में है।

**विश्लेषण** :- सम्पूर्ण अध्ययन से स्पष्ट है कि उत्तर भारत में जैन परम्परा के विपरीत यक्ष का द्विभुज स्वरूप में निरूपण ही विशेष लोकप्रिय था। केवल कुछ ही उदाहरणों में यक्ष चतुर्भुज है।[2] यक्ष की स्वतंत्र मूर्तियों का उत्कीर्णन नवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ। यक्ष की प्रारम्भिक मूर्तियां ओसिया के महावीर मन्दिर से मिली हैं। पार्श्वनाथ की मूर्तियों में पारम्परिक यक्ष का चित्रण दसवीं-ग्यारहवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ।[3] यक्ष के साथ कूर्मवाहन केवल एक ही मूर्ति (विमलवसही की देवकुलिका 4) में उत्कीर्ण है। जिन-संयुक्त एवं स्वतंत्र मूर्तियों में यक्ष के साथ केवल सर्पफणों के छत्र और हाथ में सर्प के प्रदर्शन में ही परम्परा का निर्वाह किया गया है। पुरातात्विक स्थलों पर मूर्तिविज्ञान की दृष्टि से यक्ष का कोई स्वतन्त्र रूप भी नहीं निश्चित हुआ। केवल विमलवसही की देवकुलिका 4 की मूर्ति में ही यक्ष के निरूपण में पारम्परिक विशेषताएं प्रदर्शित हैं।[4] एक उदाहरण के अतिरिक्त[5] श्वेताम्बर स्थलों की अन्य सभी जिन-संयुक्त मूर्तियों में यक्ष सर्वानुभूति है। पर दिगंबर स्थलों पर सामान्य लक्षणों वाले यक्ष के साथ ही कभी-कभी स्वतंत्र लक्षणों वाले यक्ष भी निरूपित हैं। कई उदाहरणों में सर्पफणों के छत्र वाले यक्ष के हाथ में सर्प भी प्रदर्शित है।

---

1. यह पाताल यक्ष की भी मूर्ति हो सकती है।
2. चतुर्भुज मूर्तियां देवगढ़, खजुराहो, राज्य संग्रहालय, लखनऊ, विमलवसही एवं लूणवसही से मिली है। दिगंबर स्थलों पर चतुर्भुज यक्ष की अपेक्षाकृत अधिक मूर्तियां हैं।
3. देवगढ़, खजुराहो एवं राज्य संग्रहालय, लखनऊ।
4. मोदकपात्र के अतिरिक्त।
5. विमलवसही की देवकुलिका 4 की मूर्ति।

## (23) पद्मावती यक्षी

**शास्त्रीय परम्परा :** पद्मावती जिन पार्श्वनाथ की यक्षी है। दोनों परम्पराओं में पद्मावती का वाहन कुक्कुट-सर्प (या कुक्कुट) है[1] तथा देवी के मुख्य आयुध पद्म, पाश एवं अंकुश हैं।

**श्वेताम्बर परम्परा-निर्वाणकलिका** में चतुर्भुजा पद्मावती का वाहन कुर्कुट है और उसके दक्षिण करों में पद्म, और पाश तथा वाम में फल और अंकुश वर्णित हैं।[2] समान लक्षणों का उल्लेख करने वाले अन्य सभी ग्रन्थों में कुर्कुट के स्थान पर वाहन के रूप में कुर्कुट-सर्प का उल्लेख है।[3] मन्त्राधिराजकल्प में पद्मावती के मस्तक पर तीन सर्पफणों के छत्र के प्रदर्शन का निर्देश है।[4]

**दिगम्बर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह** में पद्मवाहना पद्मावती की चतुर्भुज, षड्भुज एवं चतुर्विंशतिभुज रूपों में ध्यान किया गया है।[5] चतुर्भुजा पद्मावती के तीन हाथों में अंकुश, अक्षसूत्र एवं पद्म; तथा षड्भुजा यक्षी के करों में पाश, खड्ग, शूल, अर्धचन्द्र (वालेन्दु), गदा एवं

---

1. **प्रतिष्ठासारसंग्रह** में वाहन पद्म है।
2. पद्मावती देवी कनकवर्णा कुर्कुटवाहनां चतुर्भुजां पद्मपाशान्वितदक्षिणकरां फलांकुंशाधिष्ठित वामकरां चेति।। **निर्वाणकलिका** 18.23
3. **त्रि.श.पु.च.** 9.3.364-35, **पद्मानन्दमहाकाव्यः** परिशिष्ट-**पार्श्वनाथ** 93-94, **पार्श्वनाथचरित्र** 7.829-30, **आचारदिनकर** 34, पृ. 177, **देवतामूर्तिप्रकरण** 7.63, **रुपमण्डन** 6.21.
4. **मन्त्राधिराजकल्प** 3.65
5. देवी पद्मावती नाम्ना रक्तवर्णा चतुर्भुजा।
   पद्मासनांकुशं धत्ते अक्षसूत्रं च पंकजं।
   अथवा षड्भुजा देवी चतुर्विंशति सद्भुजा।।
   पाशासिकुंतवालेन्दुगदामुशरसंयुतं।
   भुजाष्टकं समाख्यातं चतुर्विंशतिरुच्यते।।
   शंखासिचक्रवालेन्दु पद्योत्पलशरासनं।
   पाशांकुशं घंट (यायु) बाणं मुशलखेटकं।
   त्रिशूलंपरशुं कुन्तं भिण्डमालं फलं गदा।
   पत्रंचपल्लवं धत्ते वरदा धर्मवत्सला।। **प्रतिष्ठासारसंग्रह** 5.67-71

मुसल वर्णित हैं। चतुर्विंशतिभुज यक्षी के करों में शंख, खड्ग, चक्र, अर्धचन्द्र (वालेन्दु) पद्म, उत्पल, धनुष (शरासन), शक्ति, पाश, अंकुश, घण्टा, बाण, मुसल, खेटक, त्रिशूल, परशु, कुंत, भिण्ड, माला, फल, गदा, पत्र, पल्लव एवं वरदमुद्रा के प्रदर्शन का निर्देश है।[1] **प्रतिष्ठासारोद्धार** में भी कुक्कुट सर्प पर आरूढ़ एवं तीन सर्पफणों के छत्र से युक्त यक्षी का सम्भवतः चतुर्विंशतिभुज रूप में ही ध्यान है। पद्म पर आसीन यक्षी के करों में अंकुश, पाश, शंख, पद्म एवं अक्षमाला आदि प्रदर्शित हैं।[2] **प्रतिष्ठातिलकम्**[3] में भी सम्भवतः चतुर्विंशतिभुज पद्मावती का ही ध्यान किया गया है। पद्मस्थ यक्षी के छह हाथों में पाश आदि और शेष में शंख, खड्ग, अंकुश पद्म, अक्षमाला एवं वरदमुद्रा आदि के प्रदर्शन का निर्देश है। ग्रन्थ में वाहन का अनुल्लेख है। **अपराजितपृच्छा** में चतुर्भुजा पद्मावती का वाहन कुक्कुट और करों के आयुध पाश, अंकुश, पद्म एवं वरदमुद्रा हैं।[4]

(क्रमशः)

---

1. बी. सी. भट्टाचार्य ने **प्रतिष्ठासारसंग्रह** की आरा की पाण्डुलिपि के आधार पर वज्र एवं शक्ति का उल्लेख किया है। द्रष्टव्य, भट्टाचार्य, बी.सी., **पू. नि.**, पृ. 144.
2. येष्टुं कुर्कटसर्पगात्रिफणकोत्तंसाद्विषोयात षट्
पाशादिः सदसत्कृते च धृतशंखास्पादिदो अष्टका।
तां शान्तामरुणां स्फुरच्छृणिसरोजन्माक्षव्यालाम्बरां
पद्मस्थां नवहस्तकप्रभुनतां यायज्मि पद्मावतीम्।। **प्रतिष्ठासारोद्धार** 3.174
3. पाशाद्यन्वितषड्भुजारिजयदा ध्याता चतुर्विंशति।
शंखास्यादियुतान्करांस्तु दधतो या क्रूरशान्त्यर्थदा।।
शान्त्यै सांकुशवारिजाक्षमणिसद्दानैश्चतुर्भिः करैर्युक्ता।
तां प्रयजामि पार्श्वविनतां पद्मस्थपद्मावतीम्।। **प्रतिष्ठातिलकम्** 7.23, पृ. 347-48
4. पाशाङ्कुशौ पद्मवरे रक्तवर्णा चतुर्भुजा।
पद्मासना कुक्कुटस्था ख्याता पद्मावतीतिच।। **अपराजितपृच्छा** 221.36

# स्वभाव-दर्शन का दर्पण-अहिंसा

श्रीमती कल्पना मुकीम

द्रव्यप्राणों के अंतर्गत दस प्राणों का वर्णन[1] इस प्रकार है यथा-

1. **श्रोतेन्द्रिय बलप्राण** - जिससे सुनने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
2. **चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण**- जिससे देखने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
3. **घ्राणेन्द्रिय बलप्राण** - जिससे गंध लेने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
4. **रसनेन्द्रिय बलप्राण** - जिससे स्वाद लेने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
5. **स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण** - जिससे स्पर्श योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
6. **श्वासोच्छवास बलप्राण** - जिससे श्वसन योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
7. **मन बलप्राण** - जिससे मनोवर्गणा योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
8. **वचन बलप्राण** - जिससे भाषा वर्गणा योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
9. **काया बलप्राण** - जिससे हलन चलन योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।
10. **आयुष्य बलप्राण** - जिसके कारण जीव निश्चित अवधि तक किसी योनि में रह सकता है।

जिसके लिए जितने प्राण (पर्याप्त एकेन्द्रिय में उपरोक्त दस द्रव्य

---

1. श्री अमर भारती, मई, 2000, पृष्ठ-32

प्राणों में से 5, 6, 9, 10, यह चार प्राण तथा ऊपर ऊपर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्ता तक दसों प्राण) नियत है, वह उन्हें धारण करता है। उनमें से किसी भी प्राण का अतिपात अथवा घात करना हिंसा है।

दूसरे शब्दों में यह कह सकते है स्वयंमेव किसी भी कारण अथवा निमित्त से प्राणों का नष्ट होना हिंसा नहीं है। इसके अतिरिक्त किसी भी प्रकार से स्व अथवा पर का प्राण हनन हिंसा की कोटि में आता है।

विदेशों में कतिपय स्थानों पर 'युथनेशिया'[1] (good death) इच्छामृत्यु का अधिकार व्यक्ति को दिया गया है। इच्छामृत्यु से यहाँ यह अर्थ अभिप्रेत है कि कोई व्यक्ति अति वृद्ध, अति रोगी अर्थात् पूर्णतः पराधीन आदि होने से उसकी इच्छा और सरकार की परवानगी से सुई (इंजेक्शन) या दवा के माध्यम से चिरनिद्रा (मृत्यु) दीं जा सकती है।

ब्रिटेन में बीमार-रुग्न-मरीज व्यक्ति जब स्वास्थ्य संदर्भ में जीना दुस्त्यज समझते है तथा मृत्यु को अंगीकार करना चाहते है तब वहाँ स्थापित एक वैद्यकिय समिति रुग्न की जाँच कर उसके मर्ज को लाईलाज अथवा निस्तारा करने से परे मानती है तो उसे सहमति देती है व इंजेक्शन या दवा के माध्यम से स्थायी निद्रा के अधीन/हवाले कर दिया जाता है।

नीदरलैण्ड, यूनाइटेड स्टेट, केनडा आदि राष्ट्रों में व्यक्ति की इच्छा होना ही प्रधान है। किसी समिति वा सरकार की इस परवागनी का होना आवश्यक नहीं। इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त होना स्वेच्छा (Voluntary) मृत्यु कहलाता है। इसके विपरीत कोमा, मानसिक रोग गंभीरता को प्राप्त, अति कम उम्र, निर्णय क्षमता में हित आदि अन्य कारणों से व्यक्ति विशेष की मृत्यु का निर्णय किसी अन्य द्वारा लिया जाना Non Voluntary कहलाता है।

हिंसा का इससे बड़ा ताण्डव और क्या हो सकता है? स्वेच्छा-

---

1. Wikipedia.org.

मरण को स्वीकारना अथवा स्वीकृति देना, दोनों ही स्वदया-परदया मानकर किया जाता है जबकि यह परिभाषा का विपरीत अर्थ है अर्थात् हिंसा है। कुल मिलाकर पंचेन्द्रिय का घात उस पर सिरमौरता यह कि यह हिंसा नहीं, दया है, अहिंसा है। कृतकर्म से भाग-दौड़ अर्थात् भवभ्रमण का विस्तार।

दौड़ का यही दौर चलता रहा तो अनागत में आत्महत्या 'एक मूलभूत अधिकार' के अन्तर्गत भी आ जाए तो अचंभित-विस्मित-अवाक् होने जैसा कुछ नहीं। अहिंसा की नींव-धरातल-पृष्ठभूमि से रहित एकमात्र हिंसा और मात्र हिंसा का साम्राज्य-एकाधिकार-बोलबाला।

पुरातन काल का घटचटकमोक्ष[1] एक खारपिटक मत वह इसी प्रकार की इच्छा मृत्यु से मिलता था। जीवन समाप्त करने के इच्छुक व्यक्ति को हवाबंद कक्ष में बन्द कर दिया जाता जिससे वह कालधर्म (मृत्यु) को प्राप्त हो जाता था। प्राणों का घात स्वमेव हुआ नहीं बल्कि इच्छापूर्वक ऐसा किया गया, यही हिंसा है।

हिंस्य के अन्तर्गत द्रव्य प्राण के पश्चात् भाव प्राण किसे कहते है? चैतन्य और बलप्राण को भाव प्राण कहते है।[2] सिद्धों में भाव प्राण शुद्ध स्वरूप एवं शाश्वत होता है। सिद्धों में यह भाव प्राण चार प्रकार का होता है, यथा–ज्ञान, दर्शन, सुख, शक्ति (बल)। संसारी जीवों में इस भाव प्राण के दो भेद है, यथा– भावेन्द्रियाँ, बलप्राण।[3]

भाव प्राण (यह भेद संसारी जीवों में हैं)

↓

| | |
|---|---|
| पाँच भावेन्द्रियाँ | तीन बलप्राण (जीव के वीर्यगुण की पर्याय है) |
| ↓ | ↓ |
| श्रोतेन्द्रिय | मन बलप्राण |

1. जिनेन्दु, प्रधान सम्पादक-जिनेन्द्रकुमार, 25 अप्रैल 2002, पृष्ठ-407
2. श्री टोडरमल ग्रन्थमाला का 49वाँ पुष्प, 22वाँ संस्करण, 27 अगस्त 1998, पृष्ठ 25
3. वही, पृष्ठ-26

| | |
|---|---|
| चक्षुरिन्द्रिय | |
| घ्राणेन्द्रिय | वचन बलप्राण |
| रसनेन्द्रिय | |
| स्पर्शेन्द्रिय | काय बलप्राण |

भावेन्द्रियाँ सब चेतन है और ज्ञान की मति रूप पर्यायें है। दस द्रव्य प्राण और आठ भाव प्राण संसारी जीवों के बलप्राण है।[1] भावेन्द्रियाँ साधन है। यदि यह कार्य नहीं करें तो द्रव्य रूप चक्षु आदि दिखाई दे सकते हैं, किन्तु इनके द्वारा देखना आदि कार्य संपन्न नहीं हो सकते।

उपर्युक्त कथन का और भी स्पष्ट विवेचन इस प्रकार है यथा-

श्रोतेन्द्रिय भाव बलप्राण– श्रोतेन्द्रिय भाव बल प्राण से अभिप्राय श्रवण शक्ति से है ना कि केवल श्रोत (कान) से है। द्रव्य बल प्राण नाम कर्मोदय है तथा भाव बलप्राण ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के क्षयोपशम से प्रकट हुई आत्मशक्ति/चेतना विशेष है।[2]

पुरुषार्थ सिद्धि 43 में आचार्य अमृतचन्द्र वैचारिक और मानसिकता से सम्बन्धित संकल्प पूर्वक हिंसा को स्पष्ट करते हुए कहते है कि जब मन में कषाय उद्भूत होते हैं, तो सर्व प्रथम शुद्धोपयोग रूप भाव प्राणों का घात होता हैं।[3]

इस प्रकार हिंस्य के अंतर्गत समाहित द्रव्य प्राण व भाव प्राणों का हनन स्वयंमेव न होकर स्व अथवा पर के द्वारा उद्देश्य पूर्वक किया जाना ही हिंसा है, यह स्पष्ट है।

हिंसा घटित होने में कारणीभूत हिंसक व हिंस्य को विदित करने के पश्चात् हिंसा व हिंसा के फल पर प्रकाश डालना अनिवार्य

---

1. श्री टोडरमल ग्रंथमाला का 49 वाँ पुष्प, 22वाँ संस्करण, 27 अगस्त 1998, पृष्ठ-26
2. तत्त्व-चिंतामणि, भाग-3, लेखक मुनि सुमन कुमार, श्रमण, 29 फरवरी, 1196, पृष्ठ-127
3. पंच परमेष्ठि मीमांसा, डॉ. साध्वी सुरेखाश्री, पृष्ठ-274

है, जो अहिंसा की वरियता को उजागर करेगा। अतः हिंसा के स्वरूप पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विवेचन प्रस्तुत हैं।

हिंसा शब्द की उत्पत्ति व परिभाषाएँ प्रारम्भ में ही स्पष्ट की जा चुकी है। अतएव हिंसा को और भी भलीभाँति स्पष्ट करने हेतु उससे सम्बन्धित अन्य मुद्दों पर चर्चा की जा रही है। इस श्रृंखला में सबसे प्रथम हिंसा के द्वार पर विवेचन प्रस्तुत हैं।

**हिंसा के द्वारः योग और करण** :-[1] योग किसे कहते है? योग सूत्र में ध्यान तथा समाधि को योग कहा जाता है। संक्षेप में चित्तवृत्तियों का निरोध किन्तु यहाँ जैन शास्त्र की अपेक्षा से मन-वचन-काया का जो कार्य होता रहता है, वह योग कहलाता है। तथापि जिस पौद्गालिक शक्ति से आत्म प्रदेशों में जो कंपन होता है, उसे योग कहते हैं।

डॉ. सरोज साध्वी सरोज श्री ने योग की व्याख्या इस प्रकार की है–मन, वचन और काया की क्रिया, प्रवृत्ति एवं व्यापार को योग कहते है।[2] योग के तीन प्रकार है–मनोयाग, वचनयोग, और काययोग।

**1. मनोयोग** :- अर्थात् विचार करना वा मनन करना। मन के द्वारा होने वाला आत्मा का प्रयत्न मनोयोग है। कहा गया है– **'मन एवं मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयो'**।[3] अर्थात् मन ही मनुष्य के बन्धन व मोक्ष का कारण है। मन के भी दो विभाग किये गये है। द्रव्य मन और भाव मन।

अ) **द्रव्य मन** :- द्रव्यमन को objective mind कहते है। द्रव्य मन का सम्बन्ध ब्रेन (Brain) से है।

ब) **भाव मन** :- भाव मन को Subjective mind कहते हैं। इसका संबंध आत्मा से है क्योंकि भाव मन ज्ञान रूप है।

मन का कार्य मनन, चिंतन, संकल्प-विकल्प, इच्छाएँ करना होता

---

1. अहिंसा-दर्शन, लेखक-अमर मुनि, पृष्ठ 148
2. आगम पच्चीस बोल, डॉ. साध्वी सरोज श्री, वर्ष 2000/1999, पृष्ठ-50
3. जैनदूत, अंक-2, फरवरी-2013, पृष्ठ-14

है। जो शुभाशुभ दोनों ही प्रवृत्तियों में होता है। जिसके आधार पर सत्य, असत्य, मिश्र व व्यवहार ऐसे चार मनोयोगों के भेद किये जाते हैं।

आत्मा की विभाव दशा में यह योग कर्मबन्ध एवं भवभ्रमण कराते हुए प्राणी को अपने लक्ष्य से च्युत करने में उद्यत रहते हैं तो स्वभावानुसार (आत्मा के) शुभ प्रवृत्ति में व्यक्ति को 'कंकर से शंकर' 'नर से नारायण' 'आत्मा से परमात्मा' अथवा 'जैन से जिन' बनाने की कुव्वत भी इनमें ही होती हैं।

हिंसक व्यक्ति अधिकांशतः आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, संरंभ, समारंभ और आरंभ रूपी अशुभ प्रवृत्ति करता हुआ अपने आचार को मलिन कर लेता है। इसी अशुभ प्रवृत्ति को दंड कहते है, जो हिंसक व्यक्ति में मौजूद होते है। यथा–विवाद करना, निर्दय विचार करना, व्यर्थ कल्पनाएं करना, मन को वश में न करके इधर-उधर भटकने देना, दूषित और अपवित्र विचार रखना, किसी के प्रति घृणा, द्वेष, अनिष्ट चिंतन करना आदि आदि।[1]

हिंसा की पार्श्व भूमि में मनोयोग, पौद्‌गलिक शक्ति द्वारा आत्मा से हलन-चलन कर पाप-बंध की ओर ढकेलता रहता है। यही हिंसा का प्रथम उद्‌गम-स्थल हैं।

**2. वचन योग** :- वचन का योग बोलना है (भाषा के द्वारा होने वाला आत्मा का प्रयत्न वचन योग है। यह शुभाशुभ दोनों प्रकार से होता है। सत्य, हित, मित, निर्दोष, असंदिग्ध भाषा शुभ प्रवत्ति की द्योतक है। असत्य, कर्कश, अहितकर, चुगली, विकथा, हिंसक जैसे–संरंभ, समारंभ, आरंभ सम्बन्धी भाषा अशुभ प्रवृत्तिमय है। शुभाशुभ की अपेक्षा से सत्य असत्य मिश्र व व्यवहार वचनयोग ऐसे इसके चार भेद हैं।

अशुभ प्रवृत्यात्मक वचन दण्ड में-असत्य, मिथ्या भाषण करना, किसी की निन्दा वा चुगली करना, कडुआ बोलना, गाली एवं शाप देना, अपनी बड़ाई हांकना, व्यर्थ की बातें करना, शास्त्रों के सम्बन्ध में मिथ्या प्ररूपणा करना[2] आदि-आदि का समावेश होता है।

---

1. श्रमण सूत्र, अमरमुनि, तृतीय संस्करण, 2012, पृष्ठ-274
2. श्रमण सूत्र, अमरमुनि, तृतीय संस्करण, 2012, पृष्ठ-274

दण्डात्मक वचन योग केवल बोलने मात्र से ही जीव के कुछ ना किये जाने पर भी उन्हें हिंसा का भागी बनाकर आत्मस्वभाव से पदच्युत करता है। नौ ग्रैवेयक तक पहुँचने जैसी उत्कृष्ट क्रिया करने वाले जमालि आदि निन्हव मिथ्या प्ररूपणा करने से अनंत भव भ्रमण को प्राप्त हुए इसके उदा. शास्त्रों में है। जमालि ने कडमाणे कडे का अर्थ प्रभु महावीर वाणी के विरुद्ध किया था। केवल जिनवाणी के विरुद्ध एक वचन-हिंसा, परिणाम-अनंत भव भ्रमण।

**3. काय योग :–** शरीर की हलन चलनादि क्रिया करना काय योग है तथापि ऐसी क्रिया करते हुए जो शरीर वर्गणा के पुद्गल ग्रहण किये जाते है, वे द्रव्य काययोग तथा जीव की पुद्गलों की सहायता से जो प्रवृत्ति होती है, उसे भाव काययोग कहते हैं।

काययोग के औदारिक, औदारिक-मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय-मिश्र, आहारक, आहारक-मिश्र व कार्मण ऐसे सात भेद है।

काया की अशुभ प्रवृत्ति दण्ड है जो दूसरे को दुःख पहुँचाती है, यथा–किसी को पीड़ा पहुँचाना, मारपीट करना, व्यभिचार करना, किसी की चीज चुराना, अकड़कर चलना, व्यर्थ की चेष्टाएँ करना, असावधानी से चलना, किसी चीज को उठाने और रखने में अयतना करना आदि।

मन, वचन व काया के अशुभ योगों से दण्डात्मक प्रवृत्तियों द्वारा जीव हिंसा करता है। अतएव यह तीनों योग हिंसा के द्वार कहे जाते हैं।

योग तो साधन है योग से शुभ-अशुभ दोनों ही घटित होते है योगों की अशुभ प्रवृत्ति हिंसा का द्वार है तो पूर्णतः शुभ प्रवृत्ति अहिंसक ही कर सकता है। तीन योग के संयोग से कुल सात विकल्प होते है, यथा–1. मन, 2. वचन, 3. काया, 4. मन और वचन, 5. मन और काया, 6. वचन और काया तथा 7. मन, वचन और काया।

हिंसा के द्वार के अंतर्गत तीन योगों के साथ तीन करण का भी समन्वय होता है।

**करण :-** करण किसे कहते है?[1] योग और अध्यवसाय के बल को करण कहा जाता है। कर्म संबंधी विभिन्न क्रियाएँ इसी बल द्वारा साधी जाती है।

करण के तीन भेद है–कृत अर्थात् करना, कारित अर्थात् करवाना तथा अनुमत्त अर्थात् अनुमोदन करना।

स्वयं करना, दूसरों से करवाना तथा किसी के द्वारा किये की अनुमोदना करना यह तीनों करण हैं।

इस प्रकार तीन करण को तीन योग से गुणित करने पर नौ मार्ग होते है, जिससे कर्म बंधते रहते है। प्रत्येक मार्ग एक कोटि का गिना जाता है। अतएव नौ कोटि से उत्कृष्ट हिंसा होती है व नौ कोटि प्रत्याख्यान से उत्कृष्टतः रोकी भी जा सकती है, जो केवल मुनि द्वारा ही संभव है। श्रावक सदैव जघन्य दो से उत्कृष्ट आठ कोटि तक ही प्रत्याख्यान कर सकता है। शेष (नौवां कोटि) आवश्यक रूपी अर्थदण्ड की हिंसा में समाहित होता है।

विस्तृतः हिंसा करने वाला, हिंसा कराने वाला, हिंसा का समर्थन करने वाला, मन से हिंसा करने वाला, वचन से हिंसा करने वाला, काया से हिंसा करने वाला, सभी हिंसक की श्रेणी में आते हैं।

नौ कोटि की गणना किस प्रकार होती है? इसका समाधान इस प्रकार है–प्रत्येक करण के साथ तीन योगों को रखने से नौ विकल्प बन जाते है। अतः यह सब हिंसा के द्वार कहे गये है, जिससे प्राणी हिंसा करता है। तीन करण व तीन योगों से नौ कोटि की, की गई हिंसा के तीन स्तर है। हिंसा स्तरों के निर्धारण में दो साधन काम आते है-

1. हिंस्यों के आत्मविकास के स्तरों में रहने वाला अन्तर एवं,
2. कषाय की मात्रा। जैसे एक हिंसक व्यक्ति ने पंखा चलाकर असंख्यात वायुकायिक जीवों की हिंसा की तो अन्य एक हिंसक ने मनुष्य की हत्या की। क्या कुफल एक हैं?

---

1. सिद्धि सोपान, प्रथम संस्करण 2011, लेखिका-साध्वी श्री सुलक्षणाश्री, प्रकाशक श्री पार्श्वमणि जैन तीर्थ ट्रस्ट मंडल, पेद्दतुम्बलम्, पृष्ठ-557

संख्या के अनुसार वायुकायिक जीव असंख्यात तथा मनुष्य केवल एक है। अनुपात के अनुसार एक से अधिक जीवों की हत्या करने वाला ज्यादह पापी व एक की हत्या करने वाला कम पापी होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं है। वायुकायिक जीवों में क्रूरता, कषाय व द्रव्य प्राणों की संख्या कम है, जबकि संज्ञी मनुष्य में दस बलप्राण यानि द्रव्य प्राणों की संख्या भी अधिक व इसके अतिरिक्त हिंसा निमित्तिक कषाय व क्रूरता भी अधिक। अतएव मनुष्य हत्या का पापी अधिक हिंसक है।

आत्म विकास स्तर व कषाय की मात्रा के आधार पर हिंसा के तीन स्तर होते है। अमरमुनिजी ने[1] (1) संरंभ, (2) समारंभ एवं (3) आरंभ इन तीन स्तरों का उल्लेख किया है।

**1. संरम्भ** :–विचारों में अथवा मन में हिंसा का उत्पन्न होना ही संरम्भ कहलाता है, जिनकी कलुषित भावनाएं (कषाय, प्रमाद, आदि) हिंसा का मानस जीव में उत्पन्न करती है। इसे ही संरम्भ रूप हिंसा कहते है जो भाव-हिंसा में निहित है। इसमें द्रव्य प्राणों का हरण नहीं होता।

**2. समारम्भ** :– हिंसा करने की भावना से तत्सम्बन्धी सामग्री का इकट्ठा किया जाना ही समारम्भ रूपी भाव-हिंसा का द्योतक है। यहाँ भी द्रव्य प्राणों का घात नहीं होता।

**3. आरम्भ** :– संरम्भ व समारंभ के स्तर से गुजर जाने के बाद स्वयं के कषाय रूपी भावों के न्यूनाधिक प्रमाणानुसार आरम्भ करता हुआ जीव भाव एवं द्रव्य दोनों रूप से हिंसा का अपराधी बनता है।

**हिंसा के कारण** :– हिंसा के पीछे क्या कारण होते है? श्रमण सूत्र में जीव हिंसा के छः कारणों[2] का आचारांग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध और प्रथम अध्ययन में होने का उल्लेख हैं–

1. जीवन निर्वाह के लिए
2. लोगों से वीरता आदि की प्रशंसा पाने के लिए
3. सम्मान पाने के लिए

---

1. अहिंसा-दर्शन, अमरमुनि, पृष्ठ-253
2. श्रमण सूत्र, अमरमुनि, तृतीय संस्करण 2012, पृष्ठ-307

4. अन्नपान आदि का सत्कार पाने के लिए
5. धर्म भ्रान्ति के कारण जन्म-मरण से मुक्ति पाने के लिए
6. आरोग्य सुख तथा शान्ति पाने के लिए

हिंसा के पाँच समादान[1] सूत्रकृतांग में होने का उल्लेख मुनि नथमलजी ने किया है– 1. अर्थदण्ड, 2. अनर्थदण्ड, 3. हिंसा-दण्ड, 4. अकस्मात-दण्ड और 5. दृष्टि विपर्यास दण्ड।

**अर्थ-दण्ड :–** स्व-शरीर रक्षा हेतु वा परिवार, मित्र, समाज, देश आदि के पालन पोषण के प्रयोजन वश हिंसा करना, उसे अच्छा समझना, दूसरों के द्वारा भी इन निमित्तों के लिए हिंसा करवाना आदि अर्थ-दण्ड कहलाता है। जो हिंसा तो है, पाप भी लगता है लेकिन जीव अर्थ-दण्ड का ही भागी बनता है।

**अनर्थ-दण्ड :–** आवश्यकता से अधिक आरम्भ अनर्थ-दण्ड की श्रेणी में आता है। महापंडित आशाधरजी के अनुसार[2] पापोपदेश, हिंसादान, दुश्रुति, अपध्यान और प्रमादचर्या के द्वारा त्रस और स्थावर जीवों के मन, वचन, काया के प्रयोजन बिना घात करना अनर्थदण्ड कहलाता है।

श्री अमोलक ऋषिजी के अनुसार[3] बिना प्रयोजन अथवा प्रयोजन से अधिक जो आरम्भ किया जाता है, वह अनर्थ-दण्ड है।

महापंडित आशाधरजी तथा श्री अमोलक ऋषिजी द्वारा दी गई परिभाषा में अन्तर है। आशाधरजी प्रयोजन के बिना तो श्री अमोलक ऋषिजी प्रयोजन से अधिक शब्द का भी प्रयोग करते है।

आशाधरजी का प्रयोजन के बिना करना शब्द, संग्रह वृत्ति की

1. अहिंसा तत्त्व दर्शन, लेखक-मुनि नथमल, प्रबन्ध सम्पादक-छगनलाल शास्त्री, प्रथम संस्करण, प्रकाशक-आदर्श साहित्य संघ, चुरू, अगस्त, सन् 7990, पृष्ठ-57
2. सागारधर्मामृतम्, प्रणेता-महापण्डित आशाधर, संस्करण-प्रथम, सन् 1989-90, सन् 1989-90, पृष्ठ-67
3. जैन-तत्त्व-प्रकाश, ले. पूज्यश्री अमोलक ऋषिजी महाराज, पृष्ठ-631

तरफ संकेत देता है, जो कि अनर्थ दण्ड ही है, जबकि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज के अनुसार प्रयोजन से अधिक शब्द में अनर्थ-दण्ड का आशय स्वतः स्पष्ट होने से यह परिभाषा अधिक सटीक प्रतीत होती है। 'दान देना-समकित पाना, अनर्थ-दण्ड छोड़ना मुक्ति पाना' नामक पुस्तक में अनर्थ-दण्ड के पर्यायवाची उनतीस नाम[1] दिये गये हैं। कुछ नाम यहाँ दिए जा रहे है, यथा– 1. अविवेक, 2. अपध्यान अथवा अशुभ ध्यान, 3. आलस्य, 4. निंदा, 5. कौतुहल.....25) तृष्णा, 26. विषमता, 27. दुगंच्छा, 28. भोगेच्छा, 29. संकल्प-विकल्प (संपूर्ण नामों हेतु उपरोक्त पुस्तक के पृष्ठ 57-58 तथा अनर्थ-दण्ड के विवेचन हेतु पृष्ठ 57-83 तक पढ़े।)

महापंडित आशाधरजी एवं श्री अमोलक ऋषिजी महाराज ने अनुक्रम से अनर्थदण्ड के पाँच व चार भेदों का उल्लेख किया है। श्री अमोलक ऋषिजी ने आशाधरजी द्वारा वर्णित दुश्रुति नामक अनर्थ दण्ड को प्रमादाचरित में गृहीत किया है, ठीक वैसे ही जैसे मध्यवर्ती बाईस तीर्थंकरों के चार महाव्रत तथा प्रथम व अंतिम के पांच महाव्रत होते है, मध्यवर्ती बाईस तीर्थंकर चौथे पाँचवें महाव्रत को एक साथ मान लेते है।

अनर्थ-दण्ड के चार भेद इस प्रकार है। अपध्यानाचरित, प्रमादाचरित, हिंसाप्रदान या हिंसावचन तथा पापकर्मोपदेश।

**1. अपध्यानाचरित :-** आर्त्त व रौद्र ध्यान अपध्यान है। प्राणी इन ध्यानों से अशुभ विचार करता है यथा भोगोपभोगो के साधनों के संयोग में सुख व वियोग में दुःख करना दोनों ही अपध्यान है।

**2. प्रमादाचरित :–** पंद्रह प्रकार के प्रमादों का वर्णन पूर्व में किया गया है। इसका सेवन प्रमादाचरित अनर्थ-दण्ड है। पंद्रह प्रमादों के अन्तर्गत आने वाली चार विकथाओं में पापोत्पादक कहानियाँ, कोक

1. दान देना-समकित पाना, अनर्थ-दण्ड छोड़ना-मुक्ति पाना, शासन सेवा का लाभः जैन दर्शन चेरीटेबल ट्रस्ट, अमहदाबाद पृष्ठ-57-58

शास्त्र आदि असत् साहित्य को पढ़ना यही दुश्रुति अनर्थ-दण्ड कहलाता है। संक्षेप में अशुभ विचार, उच्चार तथा आचार से तीन योगों को मलिन करना प्रमादाचरित अनर्थ-दण्ड है।

3. **हिंसाप्रदान या हिंसावचन** :– अकारण हिंसक साधनों जैसे लाठी, झाड़ू, छुरी, चक्की, गाड़ी आदि का लेन-देन करना वा खाना स्वादिष्ट है, घर बहुत सुन्दर बनाया है, घर में रंग रोशन करवा लो आदि हिंसा प्रदान या हिंसावचन अनर्थ-दण्ड है।

4. **पापकर्मोपदेश** :– पाप रूपी अशुभ क्रिया करने की सलाह देना यथा खटमल, मच्छर के लिए इस दवा का प्रयोग करो, गर्मी में वातानुकूलित कक्ष में सोना चाहिए, झूठी गवाही या मुकदमा चलाना आदि पापकर्मोपदेश अनर्थ-दण्ड है।

3. **हिंसा-दण्ड** :– भय अथवा आशंका ग्रस्त होकर दूसरे के प्राणों का घात करना। अन्य यदि जीवित बचा तो मुझे या मेरे परिवार को खत्म न कर दें, इस भय से उसके प्राणों का हरण हिंसा-दण्ड है। स्थावर या त्रस जीवों की हत्या जैसे सांप, बिच्छू आदि के घर में निकलने से उन्हें इस भय से मार डालना कि वह फिर कहीं से निकल आया तो किसी का घात करेगा। यह हिंसा-दण्ड है।

4. **अकस्मात दण्ड** :– किसी का वध करने हेतु शस्त्र प्रयोग करते हुए उससे अन्य किसी और का वध वा घायल हो जाने को अकस्मात दण्ड कहते है। इस संदर्भ में सुजानमल का उदा. आता है। जलालउद्दिन मोहम्मद (अकबर) की बेगम 'जोधा' राजपूत थी। अत्यन्त स्नेह वश चचेरे भाई सुजानमल ने जोधा को उसके शौहर की रक्षा का वचन दिया व एक बार उसके अपने लोगों से रक्षा भी की। पश्चात् चाल-साजिश- षड़यंत्र की बू-सुंघ-आभास पाने राजमहल गया। जोधा से वचन लिया कि उसके विषय में वह किसी से कुछ नहीं कहेंगी। महामंगा (अकबर की धाय माँ) ने जोधा के प्रति नफरत के कारण उसका सुजानमल से संबंध होने की बात फैलाई। अकबर ने जोधा से पूछा लेकिन वचनबद्ध जोधा मौन रही।

अकबर सुजानमल को पकड़ने की कोशिशकर रहा था कि सुजानमल महल के सैनिकों को धराशायी कर जंगल में भाग गया, अकबर भी पीछे गया। षड़यंत्र कारियों ने इसे स्वर्ण अवसर जान अकबर की पीठ को लक्ष्य कर तीर छोड़ा। सुजानमल और अकबर में मुठभेड़ हो रही थी कि तत्क्षण सुजानमल की दृष्टि तीर चलानेवाले पर पड़ी तथा उसने फौरन अकबर को नीचे गिराया और परे हटने लगा कि निशाने की जद में आकर वह गंभीर रूप से घायल हुआ।

**5. दृष्टि विपर्यास दण्ड :–** हमें जिसे मारना है यह वही है, ऐसा निश्चित रूप से मान लेने के बाद प्राण घात किया जाता है, लेकिन यह भ्रम साबित होता है क्योंकि जिसका प्राणघात करना था यह वह नहीं होकर अन्य कोई और होता है, इसे ही दृष्टि विपर्यास दण्ड कहते हैं।

श्रवण कुमार का उदाहरण इस संदर्भ में आता है। अयोध्या के राजा दशरथ आखेट (शिकार) हेतु जंगल में जाते है, उसी समय अंधे माता-पिता की तृष्णा निवारणार्थ श्रवणकुमार तालाब के किनारे पानी लेने झुकता है। यह मुद्रा दूर से दशरथ को पशु जैसी प्रतीत होने से, प्राणी के धोखे में आकर विष-जहर-गरल बुझा बाण श्रवण कुमार पर छोड़ता है, जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है, इसे दृष्टि विपर्यास दण्ड कहते है।

हिंसा के पाँच कारणों के विश्लेषण के पश्चात् हिंसा के निमित्त राग-द्वेष की अपेक्षा से माया-लोभ तथा क्रोध-मान यह निमित्तक हिंसा की जड़े है, इस अपेक्षा से पंद्रह प्रमादों के अंतर्गत चार कषायों का वर्णन करने के बावजूद यहाँ पर पुनः निमित्तक की अपेक्षा से[1] इसका वर्णन किया जा रहा है, यथा–

**1. क्रोध निमित्तक–** अपराध प्रमाण की अपेक्षा दण्ड प्रमाण की प्रचुरता यहाँ अधिक होती है। परिवार जन द्वारा, अधिनस्थ कर्मचारी द्वारा, पड़ोस, समाज आदि द्वारा हुई छोटी सी गलती या अपराध के

1. अहिंसा तत्व दर्शन, लेखन मुनि नथमल, पृष्ठ-60

लिए उन्हें मारना, पीटना, गर्म वस्तु से जलाना, डोरी से बांधना, धूप में खड़ा रखना, कक्ष में बंद कर देना, उलटा लटका देना आदि वीभत्स प्रयोगों से दंडित करने की प्रवृत्ति क्रोध निमित्तक हिंसा कहलाती है। इसे मित्र-दोष निमित्तक हिंसा भी कहते है। यह स्व-पर अहितकारी होते है। कैसे?

क्रोधी महा चाण्डाल, कर दे आंख्यां राती।
क्रोधी महा चाण्डाल, थर थर धुजावे छाती।
क्रोधी महा चाण्डाल, थाली गिणे न कुण्डो।
क्रोधी महा चाण्डाल, जाय नरक में उण्डो।।

अर्थात् क्रोधी की आँखे लाल हो जाती है, मुँह का वर्ण काला हो जाता है। ललाट में सलवटें हो जाती है, हृदय एवं भुजाएँ फड़कने लगती है। क्रोधी क्रोध में थाली एवं अन्य बर्तनों को उठाकर फेंक देता है। क्रोधी नरक में उल्टा उत्पन्न हो जाता है।

अर्थात् क्रोधी सर्वप्रथम स्व-अहितकारी बन अपने शरीर का विनाश करता है, इतना ही नहीं वरन् इसके साथ-साथ सत्य, शील और विनय का भी।

पर-अहितकारी में किसी अन्य को तो छोड़ ही दीजिए उससे भी अधिक घातक स्थिति क्रोधावेश में माँ अपने बच्चे के साथ करती है। माँ का दूध बच्चे के पाषण के लिए होता है, वह क्रोधातिरेक में जहर में परिणत हो, शिशु के पोषण के स्थानपर शोषण करता है, अर्थात् हानि पहुँचाता है। इससे बढ़कर पर-अहितकारी और क्या हो सकता है? मुहावरा है– क्रोध में अंधा होना। एक अंग्रेज विद्वान के शब्दों में-

'An angry man shut the eyes and open his mouth'

**2. मान निमित्तक :-** मान की एक अपेक्षा अहंकार या मद (पूर्व में आठ मदों का उल्लेख हो चुका है) आठ मदों में से किसी भी निमित्त दूसरे को अपनी अपेक्षा से हेय समझना, उसकी अवहेलना-तिरस्कार या अपमान करना जो मान निमित्तक हिंसा कर्म के बन्ध का दोषी बनता है।

**3. माया निमित्तक :-** ठगी, धोखा, कपट द्वारा दूसरे को विश्वास में लेकर नाजायज लाभ प्राप्त करना, किसी की गुप्त बातें, रहस्यों को जानकर उसका उपयोग अपने मतलब को साधने के लिए करना, भीतर कुछ बाहर कुछ बनकर रहना आदि रूप से की जाने वाली हिंसा को माया निमित्तक हिंसा कहते हैं।

**4. लोभ निमित्तक :-** काम-भोगों की इच्छा हेतु साधनों का संग्रह, तत्पश्चात् उसकी संभाल व संरक्षण आदि प्रकारों से लोभ निमित्तक हिंसा का बन्ध किया जाता है।

उपर्युक्त निमित्तकों के अतिरिक्त आत्महत्या, अज्ञानता, विविध सामग्री का विविध साध्यों हेतु उपभोग आदि भी हिंसा ही है। उसपर दृष्टिपात यहाँ अपेक्षित है।

**1. आत्महत्या हिंसा है–** स्व पर के प्राणों का घात हिंसा कहलाता है, यह पूर्व में भी कहा गया है। एतदर्थ यह हिंसा ही है, इसमें कोई विवाद नहीं तथापि आत्महत्या क्यों की जाती है? इसके प्रत्युत्तर में प्रकट होने वाले सभी कारण स्वमेव हिंसा है, जैसे–परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने का भय, प्रेम, संबंधों के विफल होने से, पारिवारिक लड़ाई में अनुत्तीर्ण होने का भय, प्रेम संबंधों के विफल होने से, पारिवारिक लड़ाई-झगड़ों में क्रोधातिरेक होने से, आत्म-विश्वास की कमी, कायरता, भय, लाचारी आदि सद्गुण नाशक होने से जीवन का घात करने में कारणीभूत है। सामाजिक, न्यायिक दृष्टिकोण से भी यह पाप और हिंसा ही है।

**2. अज्ञान-हिंसा :-** हिंसा के अनेकानेक कारणों में अज्ञान भी एक कारण है। अंध-विश्वास, भोगासक्ति द्वारा हिंसा करना अज्ञानता का द्योतक है, जैसे-बलि चढ़ाना। सिद्धि प्राप्ति हेतु पशु, पक्षी यहाँ तक की नर बलि चढ़ाने में हिंसा का ख्याल तक नहीं आता। स्थावर तो दूर संज्ञी पंचेन्द्रिय की हिंसा करने के बावजूद भी उसके अहसास तक से भी वह परे होते है।

भौतिक शिक्षा प्राप्त जिन्होंने विज्ञान में जीव होने का सबूत उसका बढ़ना (growth), श्वासोच्छवास (respiration) पुनरोत्पादन (reproduction) आदि पढ़ा है वह भी उसे किताबी ज्ञान तक सीमित रखते है तथा व्यवहार में मछली आदि संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय को भी जीव मानने से इन्कार करते हैं।

इतना ही नहीं वरन् उसकी तुलना टी. वी. कम्प्यूटर जैसे यंत्रों से करने से भी नहीं चूकते। वे यहाँ तक कहते है कि उनमें (मत्स्य आदि) सर्वथा सुख-दुःख की संवेदना का अभाव है। विज्ञान की मान्यता रखने के पश्चात् भी इस प्रकार की धारणा क्या कहे? हिंसा में क्रूरता की सीमा को लांघते हुए भी अहसास से परे रहना। ऐसे विचार रखने वालों के लिये कहा है–

ज्ञान का जो आचरण नहीं करते वे पढ़े-लिखे मूर्ख कहलाते है-

**शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खाः**
**यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान।।**[1]

अर्थात् शास्त्रों का अध्ययन करके भी कई बार कई लोग मूर्ख ही रहते है जो आचरणशील पुरुष है, वही सच्चा विद्वान है।

---

1. मोक्षमार्ग में बीस कदम, आचार्य श्री पद्मसागरसूरि, संस्करण तृतीय, वि. सं. 2049, प्रकाशक– श्री अरुणोदय फाउन्डेशन पृष्ठ-52

# सोने के कंगन

श्री केवल मुनि

गाँव में आकर दोनों भाइयों ने पूछा–धर्म की विजय होती है कि अधर्म की। उस गाँव के सभी मनुष्य अविवेकी थे। उन्होंने बता दिया कि विजय अधर्म की होती है। धन्य ने उन्हें समझाने का बहुत प्रयास किया पर सब बेकार। धन्य शर्त हार गया।

कपटी धरण ने सांत्वना देते हुए कहा–यदि तुम्हें दूसरी आँख फुड़वाना भी स्वीकार हो तो अगले गाँव में निर्णय करा लें।

धन्य सोचने लगा–सभी मनुष्य ऐसे अविवेकी थोड़े ही होते हैं। उसने यह शर्त स्वीकार कर ली। अगले गाँव में भी निर्णय धन्य के विपरीत ही हुआ। उन गाँव वालों ने बताया–पापी मौज करते हैं और धर्मात्मा दाने-दाने को मोहताज। कंजूस धनवान बन जाते हैं, दानशील धनहीन। सती स्त्रियों को जीवन भर दुःख ही मिलता है और वेश्याएं मजे लूटती हैं। अतः संसार में सर्वत्र अधर्म की विजय होती है।

धरण शर्त जीत गया। धन्य ने कहा–भाई मेरे दोनों नेत्र अब तुम्हारे अधीन हैं जो इच्छा हो सो करो। धरण तो यह चाहता ही था। उसने अकौआ (आक) और डंडा थूअर जैसे जहरीले पौधों का रस डालकर धन्य की दोनों आँखें फोड़ डालीं।

कपटी व्यक्ति, अनेक प्रकार की क्रियाएं करता है जिससे कि दूसरे के हृदय में उसके प्रति सद्भावना जागे। धरण भी रोने लगा-हाय, हाय, मैंने क्या कर डाला? मैं तो हँसी कर रहा था। मुझे क्या मालूम था कि इन पौधों के रस से मेरे बड़े भाई की आँखें फूट ही जायेंगी।

सरलहृदय धन्य ने उसे आश्वासन दिया–

–भाई! शोक मत करो मुझमें और तुम में क्या अन्तर है? अब तुम्हीं मेरे सहारे हो। मुझ अंधे की लाठी।

–हाँ भाई अब मैं ही तुम्हें सहारा दूंगा।

इसके पश्चात् धरण बड़े भाई धन्य के साथ आगे चला। दोनों भाई चलते-चलते निर्जन वन में पहुँचे। धन्य तो अन्धा था ही। धरण ने एकाएक भयभीत स्वर में कहा–

–बन्धु! सिंह हम लोगों की तरफ आ रहा है। तुम्हें तो दिखाई भी नहीं देता। अब मैं क्या करूँ? हम दोनों ही मारे जायेंगे। इस विपत्ति से कैसे छुटकारा मिले?

धन्य सत्यवादी तो था ही। उसने कपटी धरण की बात का विश्वास कर लिया, बोला–

–भाई! हम दोनों की मृत्यु से तो पिता का वंश ही नष्ट हो जायेगा। मैं तो अन्धा हूँ, घर पहुँच भी नहीं पाऊंगा। तुम अपने प्राण बचाकर भाग जाओ।

–नहीं! नहीं!! यह कैसे हो सकता है? बड़े भाई को मृत्यु के मुख में धकेलकर अपने प्राण बचा लूँ। ऐसा घोर अनर्थ मैं नहीं करूँगा।

–यह समय भावुकता नहीं कर्तव्यपालन का है। तुम वंश के प्रति अपना कर्तव्य निभाओ। शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ।

बड़े भाई की इच्छानुसार धरण वहाँ से चल दिया। धरण की योजना पूरी हो चुकी थी। अब धन्य के घर वापिस आने की आशा भी दुराशा मात्र थी।

इधर दृष्टिहीन धन्य गिरता-पड़ता एक विशाल वट वृक्ष के नीचे पहुँचा और वहाँ बैठकर विलाप करने लगा–अरे मेरा भाई अकेला ही गया है। न जाने उसकी क्या दशा होगी? वह वन में ही भटक गया या सकुशल घर की ओर जा रहा है। हे भगवान! मैं किससे पूछूं? कौन मुझे बतायेगा?

उसके करुणस्वर के कारण वनदेवी को दया आई। सामने प्रगट होकर बोली–पथिक! अपने कपटी, दुष्ट भाई की चिन्ता मत करो। वह सकुशल है। चिन्ता अपनी करो। मैं यह गुटिका देती हूँ। इसे आँखों में लगाते ही कैसा भी नेत्र रोग हो, ठीक हो जायेगा, लो।

यह कहकर वनदेवी ने गुटिका धन्य के हाथ में दी और अपने स्थान को चली गई। धन्य ने गुटिका आँखों में लगाई तो उसकी आँखों में ज्योति पूर्ववत् आ गई। दृष्टि पाकर धन्य प्रसन्न हुआ और एक ओर चल दिया।

चलते-चलते धन्य सुभद्र नाम के नगर में पहुँचा। वहाँ के राजा की एक ही पुत्री थी और वह भी किसी रोग के कारण अंधी हो गई थी। राजा ने बहुत चिकित्सा कराई किन्तु परिणाम कुछ न निकला। राजा ने ढिंढोरा पिटवाया–जो भी मेरी कन्या की आँखे ठीक कर देगा मैं उसे कन्या सहित आधा राज्य दे दूँगा। ढिंढोरे को सुनकर धन्य राजमहल पहुँचा और दिव्य गुटिका के प्रयोग से राजकुमारी की आँखें ठीक कर दी। वचन के अनुसार राजा ने उसे आधा राज्य और कन्या प्रदान की। धन्य का समय सुखपूर्वक व्यतीत होने लगा।

एक दिन धन्य मार्ग में जा रहा था कि एक ब्राह्मण ने आशीर्वाद देकर कहा–राजन्! मैं परदेशी हूँ। मुझे धोती और कुछ दक्षिणा मिल जाय।

–कहाँ से आ रहे हो, ब्राह्मण?

–सुनन्दनपुर से।

–वहाँ किसी काम से गये थे?

–नहीं, वहीं तो मेरा निवास है।

धन्य को अपने नगर के ब्राह्मण से मिल कर हर्ष हुआ। महल में लाकर उसने माता-पिता और धरण का कुशल समाचार पूछा तो ब्राह्मण ने बताया–वैसे तो सब कुशलता से है किन्तु धरण के यह बताने से कि बाघ तुम दोनों की ओर दौड़ा था तुम्हारे माता-पिता को बहुत दुःख हुआ। वे तुम्हारे बारे में चिन्तित रहते हैं।

ब्राह्मण की बात सुनकर धन्य ने पूछा–

–और कुछ कहा, धरण ने?

–नहीं, बाघ की घटना के अलावा और कुछ भी नहीं बताता, वह!

'छोटा भाई धरण कुशलपूर्वक पिता के पास पहुँच गया' इस खुशी में उसने ब्राह्मण का बहुत सत्कार किया और दान-दक्षिणा देकर संतुष्ट किया। उसी को जाते समय अपनी नामांकित मुद्रिका और पिता के नाम पत्र लिखकर दे दिया।

पिता तो पुत्र का पत्र और उसकी समृद्धि से प्रसन्न हो गये किन्तु धरण के कलेजे पर साँप लोट गया। यद्यपि धन्य ने धरण के दुष्कृत्य और अपनी आँखे फूटने के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा था किन्तु बात कब तक छिप सकती थी? एक न एक दिन तो प्रगट हो ही जाने की थी।

कपटी का हृदय धक् धक् करने लगा। ऊपर से तो उसने प्रसन्नता प्रदर्शित की परन्तु मन ही मन भयभीत हो रहा था। उसने निर्णय किया–धन्य को वहीं जाकर कपट जाल में फँसाकर नष्ट किया जाय अन्यथा वह कभी न कभी घातक सिद्ध होगा। उसका जीवित रहना ही बहुत बड़ा खतरा है।

धरण ने पिता से कहा–

पिताजी! मेरा मन भाई के लिए तड़पता है। उसे देखे बिना चैन नहीं पड़ता। मैं उससे मिलने जाता हूँ। आप मुझे आज्ञा दीजिए।

भाई का भाई के प्रति प्रेम देखकर पिता प्रसन्न हुए। उन्होंने सहर्ष आज्ञा दे दी और धरण भाई से मिलने के निमित्त चल पड़ा।

सुभद्रनगर पहुँचकर धरण धन्य से मिला। छोटे भाई को देखकर धन्य बहुत प्रसन्न हुआ और उसका बहुत आदर-सत्कार किया।

धन्य तो भ्रातृ-आगमन के सुखद विचारों में खोया रहता और धरण के हृदय में कुछ और ही खिचड़ी पक रही थी। उसने यह तो

भली-भाँति जान लिया था कि अन्तिम विजय धर्म की ही होती है किन्तु धन्य की समृद्धि ने उसके हृदय में ईर्ष्या की अग्नि और भी जोर से प्रज्वलित कर दी। वह उसे नाश करने का कोई निरापद उपाय सोचने लगा।

एक दिन वह राजा के पास एकांत में पहुँचा और कहने लगा-

–महाराज! आप विवेकी है, फिर भी धोखा खा गये।

–किससे? चौंककर राजा ने पूछा।

–धन्य ने आपको धोखा दिया है।

–कैसे?

विनती-सी करता हुआ मायावी धरण बोला–यदि आप मेरा नाम न ले तो मैं आपको सच्चाई बता सकता हूँ।

–निश्चिन्त रहो। तुम्हारा नाम किसी को भी मालूम नहीं हो सकेगा। सच्चाई बताओ। महाराज ने धरण को आश्वस्त किया।

आश्वासन पाकर धरण कहने लगा–

–महाराज! हमारे नगर में एक चांडाल था। वह बहुत दुष्ट और अनाचारी था। इसी कारण राजा ने उसे देश निकाला दे दिया। वही चांडाल यहाँ आकर धन्य बन बैठा और आपकी पुत्री का पति–आपका जँवाई।

मायावी की माया चल गई। राजा को धन्य के किये हुए उपकार, सौम्य मुख मंडल, सरल हृदय, सदाचार और सत्यवादिता सभी मक्कारी दिखाई देने लगे। उसके हृदय में एक ही बात समा गई–चांडाल और मेरा जँवाई–घोर पाप है यह तो।

(क्रमशः)

# JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

## English :

1. Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:
   - Vol - 1 (satakas 1- 2) Price : Rs. 150.00
   - Vol - 2 (satakas 3- 6) 150.00
   - Vol - 3 (satakas 7- 8) 150.00
   - Vol - 4 (satakas 9- 11) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00
   (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)
3. P. C. Samsukha - Essence of Jainism Price : Rs. 15.00
   ISBN : 978-81-922334-4-4
4. Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord, Price : Rs. 50.00
   ISBN : 978-81-922334-7-5
5. Verses from Cidananda Translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - Jainthology Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-2-0
7. Lalwani and S. R. Banerjee- Weber's Sacred Literature of the Jains Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-3-7
8. Prof. S. R. Banerjee Jainism in Different States of India Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-5-1
9. Prof. S. R. Banerjee Introducing Jainism ISBN : 978-81-922334-6-8 Price : Rs. 30.00
10. Smt. Lata Bothra- The Harmony Within Price : Rs. 100.00
11. Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra- An Image of- Antiquity Price : Rs. 100.00

## Hindi :

1. Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3 Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - Chandan-Murti Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira Price : Rs. 60.00

| | | | |
|---|---|---|---|
| 6. | Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat, | Price : Rs. | 45.00 |
| 7. | Ganesh Lalwani -- Panchdasi. | Price : Rs. | 100.00 |
| 8. | Rajkumari Begani-Yado ke Aine me. | Price : Rs. | 30.00 |
| 9. | Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra | Price : Rs. | 15.00 |
| 10. | Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm | Price : Rs. | 24.00 |
| 11. | Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika | Price : Rs. | 20.00 |
| 12. | Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad<br>ISBN : 978-81-922334-8-2 | Price : Rs. | 250.00 |
| 13. | Dr. Lata Bothra - Astapad Yatra | Price : Rs. | 50.00 |
| 14. | Dr. Lata Bothra - Aatm Darsan | Price : Rs. | 50.00 |
| 15. | Dr. Lata Bothra - Varanbhumi Bengal<br>ISBN : 978-81-922334-9-9 | Price : Rs. | 50.00 |
| 16. | Dr. Lata Bothra - Tatva Bodh | Price : Rs. | |

## Bengali :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | Ganesh Lalwani-Atimukta, | Price : Rs. | 40.00 |
| 2. | Ganesh Lalwani-Sraman Sanskriti ki Kavita | Price : Rs. | 20.00 |
| 3. | Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma. | Price : Rs. | 15.00 |
| 4. | Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma | Price : Rs. | 20.00 |
| 5. | Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra | Price : Rs. | 25.00 |
| 6. | Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita | Price : Rs. | 20.00 |
| 7. | Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti | Price : Rs. | 20.00 |

## Some Other Publications :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir | Price : Rs. | 15.00 |
| 2. | Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan | Price : Rs. | 10.00 |
| 3. | Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma | Price : Rs. | 100.00 |
| 4. | Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali) | Price : Rs. | |
| 5. | Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali) | Price : Rs. | 50.00 |
| 6. | K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira | Price : Rs. | 25.00 |

**इसके अलावा जैन धर्म से सम्बन्धित अन्य तीन पत्रिकाएँ :**

| | | |
|---|---|---|
| अंग्रेजी त्रैमासिक पत्रिका | वार्षिक | 500.00 |
| **ISSN 0021 - 4043** | (आजीवन) | 5000.00 |
| हिन्दी मासिक पत्रिका | वार्षिक | 500.00 |
| **ISSN 2277 - 7865** | (आजीवन) | 5000.00 |
| बंगला मासिक पत्रिका | वार्षिक | 200.00 |
| **ISSN : 0975 - 8550** | (आजीवन) | 2000.00 |

With Best Compliments from :

# SWETA CATERERS

*Specialist in*

**OUTDOOR CATERING**
**COOKING & SERVICE**

Office :
184, JAMUNALAL BAJAJ STREET
3RD FLOOR, KOLKATA - 700 007
PHONE : 22734216

Residence :
6/4, RAJ KRISHNA KUMAR STREET
(JAHAJBARI) BELURMATH, HOWRAH
PHONE : 2654 4016 / 7959

J. C. Patwa : 9830143688
S. K. Patwa : 9331926418

108

Vol XXXIX No.03 TITTHAYARA Postal Reg. No. KOL.RMS / 70/2013-15
25th June 2015 R.N.I. 30181/77

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects, Interiors, Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700 013
Phone : 2227-5240/45, Fax : 22276356
Email Id : info@nahardecor.com